ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 237-239
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-9, No.-II, Issues-10 YEAR- Dec -2018

आंचलिक उपन्यास :परिवेश एवं भाषिक् योजना (कुमाऊँ अंचल के उपन्यासों के संदर्भ में।)

डा0 गीता पांडे
एसोसिएट प्रोफेसर– शंभूदयाल पीजी कॉलेज गाजियाबाद(उ0प्र0), भारत

Received- 10.11.2018, Revised- 16.11.2018, Accepted - 19.11.2018 E-mail: aaryvrat2013@gmail.com

सारांश : ***उत्तराखंड का सांस्कृतिक महत्त्व आदिकाल से रहा है। गंगोत्री, यमुनोत्री, केदारनाथ, बद्रीनाथ के प्रसिद्ध तीर्थ गढ़वाल में होने तथा जागेश्वर,घाट की महाकालीएवं नंदा देवी– मानसरोवर के यात्रा मार्गकुमाऊं में होने के कारण प्रत्येक यात्री को इन दोनों संभागों से होकर जाना पड़ता है। इस रूप में "उत्तराखंड" नाम से प्रत्येक भारतीय जन भली भांति परिचित हैं। किंतु यह एक आश्चर्य की बात है कि अब तक प्राप्त आलेखों शिलालेखों में उत्तराखंड नाम का कहीं उल्लेख नहीं मिलता है। "उत्तराखंड" नाम 1960 ई. में उत्तर प्रदेश सरकार ने पिथौरागढ़, चमोली, उत्तरकाशी को प्रथम जिला बनाने की कवायद में कुमाऊं एवं गढ़वाल क्षेत्र को यह नाम दिया था।***

कुंजीभूत शब्द– सांस्कृतिक महत्त्व, आदिकाल, गोत्री, यमुनोत्री, केदारनाथ, मानसरोवर यात्रा, मार्गकुमाऊं ।

स्पष्ट है कि हिमालय की गोद में बसे इस क्षेत्र की अपनी एक समृद्ध सांस्कृतिक परंपरा है नृवैज्ञानिकों ने भी स्वीकार किया है कि हजारों वर्षों से विभिन्न जातियों का आवागमन इस क्षेत्र में होता रहा है। यक्ष, गंधर्व, किन्नर, किरात नाग,आर्य, पिशाच, दरद आदि जातियों के इस भूमि में निवास का उल्लेख मिलता है। सम्भवतः यही कारण है कि कतिपय विद्वानों ने इसे "देवभूमि" भी कहा है।

भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से उत्तराखंड की भाषा को "मध्य पहाड़ी" कहा गया है। हिंदी की पांच उपभाषाओं में एक "पहाड़ी" है और पहाड़ी की तीन बोलियाँ में से एक "मध्य पहाड़ी" मानी गई है। मध्य पहाड़ी के अंतर्गत उसकी दो बोलियाँ कुमाउंनी और गढ़वाली का समावेश है, जिसे प्रायः सभी भाषावैज्ञानिकों ने स्वीकार किया है। इन दोनोंबोलियों का अपना समृद्ध, मौखिक या लिखित साहित्य है। जिससे काव्य सौंदर्य की दृष्टि से संसार की किसी भी भाषा के समकक्ष रखा जा सकता है। मौला राम, पंडित लोक रत्न पंत "गुमानी" तथा सीस राम मध्य पहाड़ी क्षेत्र के प्रारंभिक कविहैं, जिनका समय 18 वीं शताब्दी का अंतिम चरण है।

उत्तराखण्ड, चूँकि हिंदी साहित्य क्षेत्र का एक अभिन्न अंग है, अतः यहाँ के अधिकांश साहित्यकारों ने अपनी साहित्यिक अभिव्यक्ति के रूप में हिंदी को ही अपनाया है। छायावाद युग के प्रमुख स्तंभ श्री सुमित्रानंदन पंत इसी क्षेत्र के थे। प्रसादयुगीन, नाटककार श्री गोविंद बल्लभ पंत तथा हिंदी में मनोविश्लेषणात्मक कथा साहित्य की धारा के उन्नायक श्री इलाचंद्र जोशी भी इसी क्षेत्र से जुड़े प्रमुख साहित्यकार हैं और इसके अतिरिक्त छायावाद, प्रगतिवाद के सेतु रचनाकार के रूप में ख्याति प्राप्त कवि श्री चंद्र कुंवर बर्त्वाल, प्रगतिवादी कथाकार श्री रमा प्रसाद घिलडियाल,"पहाड़ी" तथा भाषा वैज्ञानिक डॉ हेम चंद्र जोशी का प्रत्यक्ष संबंध भी इसी क्षेत्र से रहा है।

स्वातंर्त्योत्तर हिंदी साहित्य में उत्तराखंड के रचनाकारों की एक लंबी सूची प्राप्त होती है जिन्होंने हिंदी कथा, साहित्य और कविता को अपनी लेखनी से समृद्ध बनाया है। विशेष रूप सेनई कहानी की एक प्रमुख धारा "आंचलिक कहानी" को तो इस क्षेत्र के रचनाकारों ने काफी समृद्ध किया है।

आंचलिक उपन्यासकारोंकी एक बहुत लम्बी सूची हमें प्राप्त होती है जिनमें शैलेश मटियानी, विद्यासागर नौटियाल, मनोहर श्याम जोशी, शेखर जोशी, "शिवानी", पानू खोलिया, हिमांशु जोशी, दयानंद अनंत, मृणाल पांडेय, पंकज बिष्ट, लक्ष्मी दत्त बिष्ट, रमेशचन्द्र शाह, प्रेम सिंह नेगी, विजेंद्र लाल शाह, ब्रज मोहन शाह, प्रदीप पंत, यमुना दत्त वैष्णव "अशोक", जगदीश चंद्र पांडेय, अकुलेश परिहार, संजय खाती, राकेश तिवारी, सुभाष पंत आदिअनेक कथाकार हैं जो इस क्षेत्र से संबद्ध हैं, कथा साहित्य को अपनी रचनाओं के द्वारा समृद्ध करते रहे हैं।

कथा साहित्य के उक्त हस्ताक्षरों का उल्लेख इसलिए भी किया गया है क्योंकि इन रचनाकारों ने अपनी अपनी विधाओं के द्वारा हिंदी साहित्य को केवल मात्रा की दृष्टि से ही रचनाएँ नहीं दी है बल्कि अपने क्षेत्र की भाषा का निजी एवं आंचलिक मुहावरा भी प्रदान किया है। इस साहित्य द्वारा केवल "मध्य पहाड़ी" का भाषा वैभव ही हिंदी में नहीं आया, बल्कि इस भाषा की अपनी स्थानीय गंध एवं भाषा की चेतना भी हिंदी में आयी है और आज भी कई शब्दहिंदी भाषा समूह के अंग भी बन चुके हैं जैसे मनोहर श्याम जोशी के "कसप" उपन्यास में "बेबी"नाम की एक नायिका है,जिसके लिए "बेबीएन" शब्द का प्रयोग हुआ है। यह व्यक्तिगत रूप से बेबी नामक पात्र की गंध के लिए आया है। इसी प्रकार कुमाऊंनीभाषा में

गंध मूलक शब्दों की लंबी परंपरा प्राप्त होती है यह गुण किसी अन्य भाषा में प्राप्त होना दुर्लभ है। देखिए निम्न उदाहरण :–
"एक औरत विदेशी सेंट से महक रही है। लेकिन इस महक के नीचे एक और गंध है– बीबीएन –बेबी– गंध और उसे यह आदमी भूल नहीं पाया है। वैसे ही जैसे कि बचुली बुआ की कोठरी और कपड़ों से आती सीलन –गंध सुमणेण को नहीं भुला है।"[1]

अंचलविशेष की भाषा के बहुतायत प्रयोग होने वाले शब्दों का भी कथाकारों ने अपनी रचनाओं में अत्यधिक प्रयोग किया हैजिससे कि भाषागत सौंदर्य बना हुआ है। जैसे :–
"कसप" उपन्यास का एक अन्य उदाहरण देखिए जहां बेबी के विषय में इस प्रकार की बातचीत सामने आती है :–
"मैंने तो कितना ही समझाया बेबी को। और सब बातचीत सुंदर से करने वाली हुई पहाड़ी में, इस बारे में कुछ कहो बस देशवाली ठोंक देगी, मेरी शादी के बारे में आप कुछ मत कीजिए प्लीज। प्लीज बल! प्लीज वालों को कोई कैसे समझा सकने वाला ठहरा!"[2]

आंचलिक भाषा को अपने मूलरूप में हिंदी साहित्य में चित्रित करने का श्रेय सर्वप्रथम श्री शैलेश मटियानी को दिया जाएगा, जिन्होंने 1955 के आसपास सर्वप्रथम अपनी कहानियों के माध्यम से तथा बाद में अपने प्रथम उपन्यास "हौलदार" के माध्यम से कुमाउंनी भाषा के निजी मुहावरे को प्रस्तुत किया। मटियानी से पूर्व कविता के क्षेत्र में सुमित्रानंदन पंत तथा श्री चंद्र कुंवर बर्तवाल ने स्थानीय बोलियों के सौंदर्य को चित्रित किया था किंतु यह चित्रण केवल इक्का दुक्का शब्दों तक ही सीमित था। नाटककार,कथाकार, गोविन्द बल्लभ पन्त तथा कथाकार इलाचंद्र जोशी ने अपने उपन्यासों, नाटकों, कहानियों में भी कुमाउंनी, गढ़वाली के भाषिक सौंदर्य को रेखांकित किया है। किन्तु यहाँ भी अपने पूर्ववर्ती रचनाकारों की भांति कुछ छींटे से ही दिखाई देते हैं। इस क्षेत्र एवं जनजीवन की विस्तृत भाषिक संवेदना नहीं दिखाई देती है। आगे के लगभग सभी कथाकारों ने परिवेशगत सच्चाई, वहाँ के खान पान, वस्त्र, प्रकृति, संस्कृति, परिवेश एवं भाषा प्रवाह को सामने रखा है। मृणाल पांडे का उपन्यास "पटरंगपुर पुराण" इस सन्दर्भ में उल्लेखनीय हैंमहानगरों से दूर स्थानीय मिट्टी की गंध जहाँ पर दिखाई देती है, कुछ इस प्रकार :–
"भीम सेन ने बनाया ठहरा खुद अपने हाथ से अपने मरे लड़के की याद में घटकू देवता का वह मंदिर। शिबौ!हिडिम्बाराछसी से हुआ ठहरा उसका वह छोकरा! राछस ठहरा तो क्या? अपना खून तो हुआ ही?"[3]

महिला कथाकार शिवानी को कौन नहीं जानता है। उनके उपन्यासों में कुमाऊं अंचल के विभिन्न चित्र दिखाई देते हैं, जिनके माध्यम से आंचलिकता प्रकट होती है। नारी जीवन के विविध चित्र उन्होंने दिए हैं पूर्व अर्जित संस्कार एवं आधुनिकता बोध उनकी रचनाओं में दिखाई देता है :–

"तू आज भीतर से कुंडी चढ़ा कर खा पीकर सो जाना मुझे भीमताल जाना है। उसने पत्नी से कहा और गबरू उनके फटे कोट पर पंखी लपेटकर निकलने ही को था।"[4]
यहाँ पर "पंखी"ठंड से बचाव के लिए लिया जाने वाला वस्त्र अथवा ओढ़ें जाने वाला ऊनी सामान है।

लोक संस्कृति का अत्यधिक मिलाजुला रूप शिवानी की रचनाओं में दिखाई देता है।हम कह सकते हैं कि हमारी बुजुर्ग पीढ़ी शिवानी के उपन्यासों, कहानियों को पढ़कर ही बड़ी हुई है। उनके कई उपन्यास है जिनमें "कृष्णवेणी" नामक उपन्यास भी महत्वूर्ण है,जिसमे पहाड़ी अंचल में प्रयोग होने वाले वस्त्रों का तक प्रयोग हुआ है।

आंचलिक भाषा प्रयोग, उसका सौंदर्य, परिवेशगत स्थितियां, मुख सुख के कारण प्रयोग होने वाले छोटे बड़े शब्द, वाक्यों के प्रयोग करने की शैली इत्यादि का वर्णन उपन्यासकार ने अपने उपन्यास में आए पात्रो के मुख से कहलवाया है। परिवेश का जिक्र करने की स्थिति में यह बताना आवश्यक है कि अनेक रचनाकारों ने संभ्रांत परिवार से लेकर मजदूर एवं निर्धन परिवारों तक की चर्चा अपने उपन्यास में की है। यहाँ तक किपढ़े लिखे और अनपढ़ लोगों की भाषा का अंतर, ग्रामीण एवं शहरी कुमाउंनी का अंतर इनके उपन्यासों सेदेखने को मिलता है। भाषा की सरलता भी यहाँ देखने को मिलती है,कुमाऊंनी भाषा का सौंदर्य इन उपन्यासों में बिखरा पड़ा है। सामान्य जीवन की व्यावहारिकता के अनेक दृश्य प्राप्त होते हैं। पंकज बिष्ट का ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त उपन्यास "उस चिड़िया का नाम" भी इसी अंचल से आता है जो गांव को लेकर आता हुआ अपनी एक पहचान बनाता चलता है। इसमें कई लोककथाएँ देखने में आती हैं। ग्रामीण मानसिकता भी इनके माध्यम से मुखर होती है। पहाड़ अपनी पहचान बनानेका प्रयास करता है। पहाड़ अपनी स्थितियों को बताता है। जरूरी चीजों से वंचित, नियति को भोगते हुए कई चित्र इनके इस उपन्यास में देखने को मिलते हैं। प्राकृतिक परिवेश भी इन सभी उपन्यासों में कम नहीं प्राप्त होता है। इन सबके माध्यम से कई बार उपन्यासों में वर्णित चरित्रों की इमेज भी बढ़चढ़ सामने आयी है।

स्वातंत्र्योत्तर रचनाकारों के द्वारा पहाड़ी भाषा के अपने निजी सौंदर्य के कलात्मक प्रस्तुतीकरण का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि कई उपन्यास, कहानियों, कविताओं तथा ललित गद्य रचनाओं के शीर्षकतक मूल भाषा में दिए गए हैं। "हौलदार", "चिट्ठीरसैन", "गोपुली गफूरन" (शैलेश मटियानी), "कसप" (मनोहर श्याम जोशी), "दाजयू", "कोसी का घटवार", (शेखर जोशी), "कैंजा" (शिवानी), "बोजयू"

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-9, No.-II, Issues-10 YEAR- Dec -2018

(सुनीता), "मांगली हुडकियानी" (प्रेम सिंह नेगी) आदि इसी प्रकार के शीर्षक रचनाकारों ने दिए हैं।

सार रूप में यही कहा जा सकता है किआरंभ से नई पीढ़ी तक के सभी कलमकारों ने अपनी रचनाओं में किसी न किसी बहाने अपने अंचल को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है और हिंदी साहित्य की मुख्यधारा के बीच इस आंचलिक साहित्य को अपने पाठकों के समक्ष रखा है तथा हिंदी साहित्य को इसके माध्यम से कहीं न कहीं समृद्ध भी किया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. जोशी, मनोहर श्याम, "कसप", राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, द्वितीय संस्करण, पृष्ठ 296.
2. जोशी, मनोहर श्याम, "कसप", राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, द्वितीय संस्करण, पृष्ठ 168–169.
3. पांडे, मृणाल, "पटरंगपुरपुराण", राधा कृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, सं. 1983.पृष्ठ 09.
4. शिवानी, "कृष्णवेणी", सरस्वती विहार, दिल्ली 1981, पृष्ठ 80.

*****